नवरात्री - एक लघु कथा

कथाकार

डॉ यतेंद्र शर्मा

प्रकाशक

श्री राम कथा संस्थान पर्थ

ऑस्ट्रेलिआ – ६०२५

नवरात्री - एक लघु कथा

जीवन की व्यथाओं से थकित मन निराशा के कगार पर पहुँच चुका है। प्रयास, असफलता एवं फिर प्रयास - उसी परिणाम के साथ, इसी कड़ी में बद्ध जीवन, नकारात्मक की ओर अग्रसित हो रहा है। स्वजनों द्वारा समझाने का प्रयत्न कि यही तो जीवन है, समझने के स्थान पर उनसे विमुख करता चला जा रहा है। हर समय बस एकांत एवं एकाकी जीवन व्यतीत करने की ही बस एकमात्र इक्षा रह गयी है। इस संसार में अपने अस्तित्व के प्रति संदेह होने लगा है।

आज मैं इतना व्यथित क्यूँ हूँ? स्वामी विवेकानंद जी ने तो स्पष्ट कहा है कि प्रत्येक मानव विशिष्ट एवं अवर्णनीय है। प्रत्येक प्राणी का भू-अवतार विशेष कार्य के लिए ही हुआ है। फिर मेरे जन्म का कारण क्या है? क्या मेरा जन्म इस भू स्थल पर केवल जीवन की कुंठाओं को सहने के लिए ही हुआ है?

मैं अतीत में खोने लगा हूँ। कुछ वर्ष पहले तो ऐसा नहीं था। क्या स्वर्णमय दिवस थे जब मैं अपने परिवार के साथ एक संतुष्ट एवं सुखमय जीवन व्यतीत कर रहा था। परिवार के साथ हँसते खेलते पता नहीं किस तरह दिन समाप्त हो रात्रि का शुभागमन होता था और मैं निद्रा देवी के आगोश में समा जाता था।

आज तो निद्रा देवी भी मुझसे रुष्ट हो गयीं हैं। सोने का भरसक प्रयास कर रहा हूँ इसी आशा के साथ कि कुछ क्षण के लिए ही सही, निद्रा देवी की गोद मुझे इस व्यथा से दूर कर सके।

यह मैं किस कंदरा में प्रवेश कर रहा हूँ? यहां तो केवल ठण्ड और अन्धेरापन ही है, फिर मैं इस अँधेरे की और क्यूँ अग्रसर होता जा रहा हूँ? देखता हूँ एक छाया मेरे समीप आ रही है।

"बड़ी ठण्ड लग रही है न वत्स?" और वह छाया अपना शॉल मेरे ऊपर डाल देती है। कौन है यह महापुरुष जो अपने स्वास्थ्य की चिंता किये बिना मेरे ठण्ड की परवाह कर रहा है? ठण्ड, थकान एवं कुंठा से व्यथित होते हुए भी मेरा हृदय यह जानने को अत्यंत उत्सुक हो रहा है। मैं इस छाया के पीछे धीरे धीरे चलना प्रारम्भ करता हूँ। यह क्या? इस कंदरा के गर्भ में प्रकाश? मैं विस्मित हो जाता हूँ। ध्यान से इन महापुरुष के चहरे को देखने का प्रयास करता हूँ। गुरुदेव? मेरा चेहरा आश्चर्यचकित हो जाता है। भगवान् गुरुदेव - इस कंदरा में! विस्मय से मेरा मुख खुला का खुला रह जाता है। मैं उनके चरण स्पर्श करने का प्रयास करता हूँ लेकिन वह अँधेरे में लुप्त हो जाते हैं। चीखते हुए मैं इस छाया के पीछे भागने का प्रयास कर रहा हूँ। लेकिन यह क्या? मुझे बेहोसी आने लगती है और मैं सुध बुध खो देता हूँ। जागने पर अपने को एक प्रकाशित प्रतिमा के समीप कुछ सन्यासियों के साथ बैठा पाता हूँ।

'कितना सुन्दर वस्त्र पाया है पुत्र, और वह भी गुरु दर्शन के साथ, कितने भाग्यशाली हो तुम', एक धीमा सा स्वर पीछे से सुनायी पड़ता है।

यह तो जाना पहचाना सा स्वर है। मैं विस्मय से पीछे मुड़कर देखता हूँ। स्वर्गीय पितामह को वहां खड़ा देख मैं आनंदविभोर हो जाता हूँ और फूट फूट कर रोने लगता हूँ। कहाँ थे बाबा आप अब तक? मुझे आपके मार्गदर्शन की अत्यंत आवश्यकता है। इस जीवन की जटिल समस्याओं ने मुझे अपाहिज कर दिया है। बहुत आहत है आपका यह पौत्र।

'मैं तो हमेशा तुम्हारे साथ ही हूँ पुत्र, और सदैव ही तुम्हारा मार्ग दर्शन करता रहता हूँ। आओ सर्व प्रथम माँ का अभिनंदन करो।' मैं पितामह के साथ प्रतिमा के समीप पहुंचकर नमन करने लगता हूँ।

यह तो काली माँ की प्रतिमा हैं न बाबा? यहां इस कंदरा में? मैं विस्मय से पितामह से यह प्रश्न पूछने लगता हूँ।

'पुत्र तुम्हारी तरह व्यथित एक सम्राट हज़ारों वर्ष पूर्व इस कंदरा में भटकते हुए पहुँच गया। कष्टों से त्रासित एवं शत्रुओं द्वारा मृत्यु डर से भयभीत वह यहां वहां भागता फिर रहा था। यह सम्राट एक अच्छा शिल्पकार भी था। ना जाने उसका क्या सूझा कि उसने इस कंदरा में माँ की प्रतिमा बना डाली। अपनी निर्मित इस प्रतिमा के आकर्षण ने उसे ध्यानस्थ होने पर विवश कर दिया और प्रारम्भ हुआ उसका माँ के प्रति प्रेम। लेकिन यह तो बस माँ की एक बेजान प्रतिमा ही तो थी और वह ठहरा एक साधारण मनुष्य। कामना करने लगा कि माँ उसके साथ वार्तालाप करें। एक लम्बे समय तक एकांतवास तथा एकाकी जीवन ने उसको उचाट कर दिया था। अब हठ कर ली कि या तो माँ उसके साथ वार्तालाप करें अथवा वह भोजन और जल छोड़कर अपने प्राण त्याग देगा। पुत्र, आठ दिनों तक ना उसने कुछ पीया और ना कुछ खाया। इतना कमजोर हो गया कि बस प्राण निकलने वाले ही थे। तभी माँ ने प्रतिमा से निकलकर उसको गोद में ले लिया और प्राण दान दिए। पुत्र, वह आठवां दिवस दुर्गाष्टमी था। माँ को समक्ष देख वह फूट फूट कर रोने लगा तथा अपने कष्टों का कारण पूछने लगा।

'दयामयी माँ ने उसके प्रेम से प्रभावित हो उसके पूर्व जन्म की स्मृति दिलाई। उसने देखा कि पूर्व जन्म में उसने बहुत मधुर कंठ पाया है तथा भगवत भजन में उसकी बड़ी रूचि है। शनैः शनैः उसके मधुर कंठ एवं भजन की प्रशंसा पूर्ण देश में फैल गयी। उसे पूज्य गुरु देव के रूप में स्थापित कर दिया गया। यहां प्रारम्भ हुआ उसका अभिमान एवं द्रव्य लालसा जो उसके पतन का कारण बना तथा उसके मित्रों को भी उसका शत्रु बना दिया।'

'इस पूर्व जन्म स्मृति ने उसका ज्ञान जगा दिया तथा उसको समझ आने लगा कि आज उसकी यह अवस्था उसी के द्वारा क्रियत है।'

'पुत्र तुम इतने व्यथित क्यूँ हो? तुम जिन असफ़लतों एवं कष्टों से दुखी हो रहे हो, तुम स्वयं ही इसका कारण हो। अतः दोष किसको? माँ से क्षमा

याचना करते हुए प्रार्थना करते रहो कि वह तुम्हें सद्बुद्धि दें, मार्ग दर्शन करें एवं क्षमा करते हुए तुम्हें कष्ट मुक्त करें।'

'सुबह हो गयी, क्या आज कार्यालय नहीं जाना। कब तक सोयेंगे?' पत्नी की आवाज़ ने निद्रा भांग कर दी। बिस्तर से उठने का मन ही नहीं कर रहा था। गहन चिंतन में फिर से डूब गया। पितामह के शब्द याद आ रहे थे तथा साथ ही नवरात्री और माँ की स्तुति का महत्व समझ आ रहा था।

मेरे अंदर का कवि जाग गया। मेरे मुख से माँ की स्तुति कविता रूप में फूट पडी, और बिस्तर में ही मैं गुनगुनाने लगा।

जय जय माँ अंबे भवानी, पूजै नर असुर देव जगजानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

कष्ट घोर ना सुमति भवानी, राह दिखाओ जगदम्बे रानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

चतुर चाल चलत चर्वाकनी, बुद्धी मूढ़ ना कुछ समझानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

शिशु बिनमाँदुग्ध बिलखानी, तड़पत मीन जस बिन पानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

निःशूल समझ संसा अज्ञानी, कूद पड़ा नदी भंवर ना जानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

भूल भुल्लै भू भ्रमित न जानी, भ्रग्मारिचिका नहीं पहिचानी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

ग्यानचक्षु अब खोल शिवानी, छोड़ सब सिडी शरणागत आनी
जय जय माँ अंबे भवानी.....।

मेरे अंदर एक नई ऊर्जा का आभास हुआ। ऐसा लगने लगा जैसे मेरी समस्त व्यथाओं का माँ ने हरण कर लिया हो। चेहरे से नकारात्मक एवं निराशा के भाव समाप्त हो गए। आज मैं जब नवरात्री की पूजा करने अपने परिवार के साथ बैठा तो रात्रि का स्वप्न, माँ का दर्शन ओर पितामह के सुविचार मेरे मस्तिष्क पर छाए रहे।

माँ को अपने समीप रखो, संभवतः आपको भी कभी निराशा और व्यथिता का अनुभव नहीं होगा। जय अम्बे भवानी !!!